अनिल कुमार बोस

बनाम

बिहार राज्य

(Anil Kumar Bose

Vs.

The State of Bihar)

और

रघुनाथ प्रसाद

बनाम

बिहार राज्य

(Raghunath Prasad

Vs.

The State of Bihar)

(10 अप्रैल, 1974)

(न्या० एच० आर० खन्ना और पी० के० गोस्वामी)

भारतीय दण्ड संहिता, 1860(1860 का 45) —धारा 420—छल करके वेतन की रकम लेना तथा बनावटी वेतन बिल बनाकर कल्पित व्यक्तियों के नाम से वेतन की रकम वितरित करना—अभियुक्तों को दोषी ठहराने के लिए उनकी आपराधिक मनःस्थिति युक्तियुक्त संदेह से परे सिद्ध होनी चाहिए।

दरभंगा मेडिकल कालेज अस्पताल में कुछ ऐसे व्यक्तियों के नाम से बनावटी वेतन बिल तैयार किए गए और उसकी रकम वितरित की गई जो कथित पदों पर कार्य नहीं कर रहे थे या उन्होंने उन पदों का कार्यभार कभी ग्रहण नहीं किया था। इस सम्बन्ध में तीन व्यक्तियों के विरुद्ध भारतीय दण्ड संहिता की धारा 420/34 के अधीन सेशन न्यायाधीश ने विचारण किया और उन्हें उक्त धारा के अधीन दोषसिद्ध किया। अपील में उच्च न्यायालय ने दोषसिद्धि और दण्डादेश को पुष्ट कर दिया। उच्च न्यायालय के निर्णय के विरुद्ध उच्चतम न्यायालय में केवल दो अभियुक्तों ने अपील की है। 1970 की दाण्डिक अपील सं० 223 उक्त मेडिकल कालेज अस्पताल के रोकड़िया ने की है और दाण्डिक अपील सं० 224 उसी अस्पताल के लेखापाल ने की है। अस्पताल की प्रक्रिया के अनुसार वेतन बिल तैयार करने का कार्य बिल लिपिक का था जिसने अपील नहीं की है। लेखापाल का कार्य बिलों की जांच करना और उसे अस्पताल के अधीक्षक के पास

1974(4) eILR(PAT) SC 1

भेजना था और रोकड़िया का कार्य वेतन बिलों तथा अन्य बिलों की नकदी प्राप्त करना और लेखा-विभाग द्वारा तैयार किए गए रसीदी रजिस्टर के अनुसार वेतन वितरित करना था। लेखापाल का प्रतिरक्षा कथन यह है कि प्रश्नगत वेतन बिल उसकी मार्फत नहीं गुजरे थे क्योंकि उन्हें अस्पताल के अधीक्षक के पास सीधे भेज दिया गया था। रोकड़िया का प्रतिरक्षा कथन यह है कि उसके लिए उन सभी व्यक्तियों को पहचानना या व्यक्तिगत रूप से जानना संभव नहीं था जिन्हें वह वेतन वितरित करता था। अपील मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित—अपीलार्थियों को दोषी ठहराने के लिए पेश किए गए साक्ष्य से उनकी आपराधिक मनःस्थिति युक्तियुक्त सन्देह से परे सिद्ध होनी चाहिए। अभिलिखित साक्ष्य के अनुसार लेखापाल के सम्बन्ध में अधिक से अधिक यह कहा जा सकता है कि उसने अधिकथित प्रकिया के नियमों का उचित रीति से अनुपालन नहीं किया और इसलिए यह उसकी ओर से की गई प्रशासनिक भूल हो सकती है परन्तु इससे अधिक और कुछ नहीं। (पैरा 11 और 12)

रोकड़िया के सम्बन्ध में उच्च न्यायालय द्वारा अभिलिखित निर्णय में रोकड़िया की ओर से अपनी प्रतिरक्षा में दी गई इस दलील को पूर्णतः अस्वीकार नहीं किया गया है कि उसके लिए उन सभी व्यक्तियों को जानना सम्भव नहीं था जिनको वह वेतन वितरित किया करता था। उच्च न्यायालय ने जिस साक्ष्य का अवलम्ब लेकर रोकड़िया के विरुद्ध निर्णय दिया था उस साक्ष्य के आधार पर उसके विरुद्ध अपेक्षित आपराधिक मनःस्थिति सिद्ध नहीं होती है और रोकड़िया सन्देह का फायदा पाने का हकदार बन जाता है। (पैरा 15)

दाण्डिक अपीली अधिकारिता : 1973 की दाण्डिक अपील सं० 223 और 224.

न्यायालय का निर्णय न्यायाधिपति पी० के० गोस्वामी ने दिया।

न्यायाधिपति गोस्वामी—

ये अपीलें विशेष इजाजत लेकर पटना उच्च न्यायालय के उस निर्णय के विरुद्ध की गई हैं जिससे दो अपीलार्थियों और एक अन्य व्यक्ति को भारतीय दण्ड संहिता की धारा 420/34 के अधीन दोषसिद्ध किया गया था। उन में से प्रत्येक को एक वर्ष के कठिन कारावास से और 200 रुपये के जुर्माने से और जुर्माना न देने पर 6 मास के कठिन कारावास से दण्डादिष्ट किया गया था। दरभंगा मेडिकल कालेज अस्पताल में डाक्टर रमा शंकर (अभियोजन साक्षी 14) और डाक्टर राम बालक सिंह (अभियोजन साक्षी 4) हाउस फिजीशियन थे और डाक्टर शैलेन्द्र कुमार (अभियोजन साक्षी 5) हाउस सर्जन था। अस्पताल हाउस सर्जन और हाउस फिजीशियन अस्पताल के विभिन्न अनुभागों में 6 मास—जनवरी से जून और जुलाई से दिसम्बर तक के लिए आम तौर पर अस्पताल के अधीक्षक

द्वारा नियुक्त किए जाते हैं और उनकी कुल मासिक उपलब्धियां 125 रुपये है। 75 रुपये वृत्तिका के रूप में और 50 रुपये भोजन भत्ते के रूप में।

2. अभियोजन का पक्षकथन यह है कि मार्च, 1963 के लिए डाक्टर रमा शंकर के नाम से, जिसने केवल 6 मास के लिए, दिसम्बर, 1962 तक कार्य किया था और जनवरी, 1963 में कार्यभार सौंप दिया था, 125 रुपये का एक बनावटी वेतन बिल तैयार किया गया था। इसी प्रकार का वेतन बिल मार्च, 1963 के लिए डाक्टर शैलेन्द्र कुमार के नाम से तैयार किया गया था जो कान, नाक और गला विभाग में कार्य करता था, किन्तु यह बिल शिशु-रोग विभाग में बनाया गया था। इसी प्रकार का अन्य वेतन बिल उसी मास के लिए डाक्टर राम बालक सिंह के नाम से तैयार किया गया था, यद्यपि उसने उस पद पर कार्य कभी नहीं किया था और उसके स्थान पर डाक्टर राणा चद्रकेतु ने कार्य किया था। उपर्युक्त तीन वेतन बिलों की रकमें खजाने से निकाल कर कल्पित व्यक्तियों को वितरित की गई थीं। विभिन्न हाउस स्टाफ के नियुक्ति पत्र और कार्यारम्भ रिपोर्टें वेतन बिल बनाने के लिए लेखा विभाग को सामान्य रूप से भेजी गई थीं।

3. योगेश प्रसाद ठाकुर बिल लिपिक था, जिसने अपनी दोषसिद्धि के विरुद्ध अपील नहीं की है। लेखापाल, रघुनाथ प्रसाद और रोकड़िया, अनिल कुमार बोस, ये दोनों हमारे समक्ष अपीलार्थी हैं। 1970 की दाण्डिक अपील संख्या 223 अनिल कुमार बोस द्वारा की गई है और 1970 की दाण्डिक अपील संख्या 224 रघुनाथ प्रसाद द्वारा की गई है। इन दोनों अपीलों की सुनवाई एक साथ की गई है और उनका निपटारा इसी एक निर्णय द्वारा किया जा रहा है।

4. प्रक्रिया के नियमों के अनुसार ऐसे वेतन बिल, बिल लिपिक द्वारा तैयार किए जाते थे, लेखापाल द्वारा उनकी जांच की जाती थी और तब वे अस्पताल के अधीक्षक के समक्ष हस्ताक्षर के लिए प्रस्तुत किए जाते थे। उसके हस्ताक्षर के पश्चात् वे बिल अस्पताल के चपरासी को दे दिए जाते थे, जो उन्हें खजाने ले जाता था और वहां से रुपये प्राप्त करने के पश्चात् वह उन्हें रोकड़िया को दे दिया करता था जो अपनी रोकड़ बही और अन्य सम्बन्धित रजिस्टरों में सुसंगत प्रविष्टियां करता था। इसके पश्चात् रसीदी रजिस्टर (एविडेन्स रोल) के अनुसार विभिन्न व्यक्तियों को वेतन वितरित किया जाता था जो रसीदी रजिस्टर पर रकम की प्राप्ति के प्रमाणस्वरूप हस्ताक्षर करते थे। वेतन के वितरण के पश्चात् उप-अधीक्षक द्वारा इस बारे में एक प्रमाणपत्र दिया जाता था कि वेतन की रकमें उसकी उपस्थिति में वितरित की गई थीं।

5. मई, 1963 में किसी समय, महालेखापाल, बिहार, के समक्ष प्रस्तुत किए जाने के लिए वार्षिक स्थापना विवरणी (ऐन्युअल एस्टेब्लिशमेण्ट रिटर्न) तैयार करते समय मुख्य लिपिक भोला नाथ झा (अभियोजन साक्षी 3) ने यह पाया

1974(4) eILR(PAT) SC 1

कि मार्च, 1963 के रसीदी रजिस्टर में स्वीकृत संख्या से अधिक हाउसमैन के नाम थे। कई स्तरों पर अनेक अधिकारियों द्वारा जांच-पड़ताल करने के पश्चात् पुलिस के पास इत्तिला दर्ज करवाई गई, पुलिस ने अंततः दो अपीलार्थियों और योगेश प्रसाद ठाकुर, बिल लिपिक, के विरुद्ध आरोप पत्र प्रस्तुत किया। सेशन न्यायाधीश ने अभियुक्तों का विचारण किया और उन्हें भारतीय दण्ड संहिता की धारा 420/34 के अधीन दोषसिद्ध किया। अपील में उच्च न्यायालय ने दोषसिद्धि और दण्डादेश को पुष्ट कर दिया।

6. बिल लिपिक की दोषसिद्धि से हमारा कोई सम्बन्ध नहीं है जिसने अपनी दोषसिद्धि स्वीकार कर ली है।

7. लेखापाल, रघुनाथ प्रसाद, का प्रतिरक्षा कथन यह है कि ये बिल उसकी मार्फत नहीं गुजरे थे इसलिए उसे उन बिलों के ठीक होने का ज्ञान नहीं था और वे अस्पताल के अधीक्षक के समक्ष उसके हस्ताक्षर के लिए सीधे प्रस्तुत किए गए थे और उसने उन पर हस्ताक्षर किए थे। उसके पश्चात् वे भुनाए जाने के लिए खजाने में भेज दिए गए थे और उसके पश्चात् उन वेतन बिलों से उसका कोई सरोकार नहीं था।

8. रोकड़िया, अनिल कुमार बोस, का प्रतिरक्षा कथन यह है कि बिलों की तैयारी से उसका कोई सम्बन्ध नहीं है। उसका कार्य तब आरम्भ हुआ जब इन बिलों और अन्य बिलों की समस्त नकदी उसे दे दी गई थी और उसने लेखा विभाग द्वारा तैयार किए गए रसीदी रजिस्टर के अनुसार वेतन वितरित किए थे। वह इन तीन डाक्टरों को व्यक्तिगत रूप से नहीं जानता था और वह छल का दोषी नहीं था।

9. चूंकि बिल लिपिक की दोषसिद्धि कायम है इसलिए यह माना जा सकता है कि उसने सरकार से छल करने के विचार से तीन बनावटी बिल तैयार किए थे।

10. अब हमें इस बात पर विचार करना है कि क्या ये दोनों अपीलार्थी भी भारतीय दण्ड संहिता की धारा 420/34 के अधीन दोषी हैं।

11. उन्हें दोषी ठहराने के प्रयोजन के लिए पेश किए गए साक्ष्य से उनकी आपराधिक मनःस्थिति युक्तियुक्त सन्देह से परे सिद्ध होनी चाहिए। अतः हम प्रत्येक अपीलार्थी के मामले पर उस दृष्टि से विचार करेंगे। जहां तक लेखापाल, रघुनाथ प्रसाद, का सम्बन्ध है, उच्च न्यायालय द्वारा इस अपीलार्थी के दोष का निष्कर्ष निकालने के लिए जिस साक्ष्य का अवलम्ब लिया गया है वह उच्च न्यायालय के शब्दों में दिया जा रहा है—

"प्रदर्श 1 लेखापाल का ड्यूटी चार्ट है। इस चार्ट की प्रथम मद—

"लेखाओं का एकमात्र भारसाधक और लेखा अनुभाग की कार्यदक्षता के

लिए उसके अधीन कार्य करने वाले सभी कर्मचारिवृन्द पर साधारण पर्यवेक्षण करना" है। इस चार्ट की तीसरी मद—"बिल बही पूरी करना और उप-अधीक्षक द्वारा उसकी जांच करवाना और उस पर हस्ताक्षर करवाना" है। मैं यह बता देना चाहता हूं कि इन विवादग्रस्त बिलों के मामले में इस कर्त्तव्य का पालन लेखापाल द्वारा नहीं किया गया है। उसके कर्त्तव्य का पांचवीं मद—"सम्बन्धित सहायक द्वारा तैयार किए गए सभी वेतन बिलों को प्रतिदिन अधीक्षक के समक्ष प्रस्तुत करना" है। अधीक्षक, अभियोजन साक्षी 9, डाक्टर सफदर अली खां ने यह कहा है कि रसोदी रजिस्टर को व्यवस्थित रूप में रखने के लिए लेखापाल उत्तरदायी है···। पैरा 21 में यह कहा गया है कि लेखापाल को चाहिए कि वह बिलों की जांच करे और तब वरिष्ठ अधिकारियों के हस्ताक्षर के लिए प्रस्तुत करे। निस्सन्देह, यह बात साक्ष्य में मौजूद है कि अधीक्षक ने कार्यालय से कहा है कि उसके हस्ताक्षर के लिए सभी बिल कार्यालय में उसकी मेज पर रखे जाया करें और जब वह उन बिलों पर हस्ताक्षर करे उस समय किसी लिपिक को वहां खड़ा नहीं रहना चाहिए। यह निदेश लेखापाल की ड्यूटी चार्ट की मद संख्या 5 के बिलकुल विरुद्ध है। मुझे नहीं मालूम कि किस प्रयोजन के लिए उसने प्रक्रिया में यह नयी रीति चलाई। किन्तु इस प्रक्रिया से लेखापाल वेतन बिलों और अन्य बिलों को अधीक्षक के पास भेजने से पूर्व जांच करने के कर्त्तव्य से मुक्त नहीं हो जाता·····। इस ओर ध्यान देना भी रोचक है कि विवादग्रस्त वेतन बिलों पर अधीक्षक के हस्ताक्षरों के नीचे लेखापाल के अद्याक्षर या हस्ताक्षर नहीं हैं ·····। जैसा कि साक्ष्य से दर्शित होता है, लेखापाल ने उत्तरदायित्व से स्वयं को मुक्त करने की दृष्टि से जानबूझकर इन कूटरचित बिलों पर हस्ताक्षर नहीं किए थे.....। सामान्य रूप से इस लेखापाल का कार्य वेतन बिलों को तैयार करवाना, उनकी जांच करना और तब उन्हें अधीक्षक के समक्ष उसके हस्ताक्षर के लिए प्रस्तुत करना था ताकि उसके हस्ताक्षर प्राप्त करने के पश्चात् बिलों को भुनाए जाने के लिए खजाने भेजा जा सके।"

12. उपर्युक्त साक्ष्य के अनुसार अधिक से अधिक यह लेखापाल द्वारा अपने कर्तव्यों का पालन करने में या ड्यूटी चार्ट में अधिकथित प्रक्रिया के नियमों का उचित रीति से अनुपालन करने में की गई विफलता थी और इसीलिए यह उसकी ओर से की गई एक प्रशासनिक भूल हो सकती है जिसके विषय में हमें इस मामले में कोई राय प्रकट करने की आवश्यकता नहीं है। लेकिन इससे अधिक कोई और साक्ष्य न होने के कारण हमारा यह विचार है कि इस अपीलार्थी पर ऐसा दूषित आशय मढ़ना उचित नहीं होगा जो भारतीय दण्ड

1974(4) eILR(PAT) SC 1

संहिता की धारा 420 के अधीन छल के अपराध के आवश्यक अंगों में से एक है इसके अतिरिक्त उच्च न्यायालय का विचार सही नहीं है और वास्तव में उसके पास यह अभिनिर्धारित करने के लिए कोई सामग्री नहीं थी कि 'लेखापाल ने उत्तरदायित्व से स्वयं को मुक्त करने की दृष्टि से जानबूझकर इन कूटरचित बिलों पर हस्ताक्षर नहीं किए थे।" अधीक्षक का ऊपर उद्धृत साक्ष्य उस निष्कर्ष के विपरीत है।

13. अन्य अपीलार्थी, रोकड़िया अनिल कुमार के सम्बन्ध में उच्च न्यायालय ने अपना निष्कर्ष निकालने के लिए जिसका अवलम्ब लिया है वह इस प्रकार है—

> "रोकड़िया के मामले पर विचार करते समय मैंने यह पाया है कि उसका ड्यूटी चार्ट प्रदर्श 1/1 है। उसका प्रथम कर्त्तव्य "प्रतिदिन रोकड़ की प्राप्ति और वितरण" है। इस ड्यूटी चार्ट के एक टिप्पण से यह दर्शित होता है—"उपर्युक्त कर्त्तव्यों के पालन के लिए पूर्णतया उत्तरदायी हो—। उप-अधीक्षक (अभि० सा० 6) ने अपने अभिसाक्ष्य के पैरा 8 में यह कहा है कि यह देखना रोकड़िया का कर्त्तव्य है कि संदाय सही या ठीक व्यक्ति को किया जाए। निस्सन्देह ड्यूटी चार्ट में इतने शब्दों में ऐसा नहीं लिखा गया है किन्तु चूंकि उसका कर्त्तव्य रुपये वितरित करना था इसलिए यह वितरण सद्भाविक रूप से अर्थात्, यदि रुपये पाने वाले से रोकड़िया परिचित न हो तो रुपये पाने वाले के सम्बन्ध में सम्यक् पूछताछ कर लेने के पश्चात् किया जाना था। अभियोजन साक्षी 5 के मामले में मार्च मास के लिए एक संदाय 5 अप्रैल को किया गया था और उसी नाम के व्यक्ति को दूसरा संदाय 10 अप्रैल अर्थात् केवल 5 दिन के पश्चात् किया गया था। यदि रोकड़िया की सद्भाविकता के पक्षकथन को स्वीकार कर लिया जाए तो उसे इस बात का पता लग जाना चाहिए था। उसकी ओर से यह दलील दी गई है कि उसके लिए सभी हाउसमैनों को जानना सम्भव नहीं था। ऐसा हो सकता है किन्तु उसे इस बात की शरण नहीं लेने दी जा सकती कि उसने यह अभिनिश्चित किए बिना ही कि वास्तविक प्राप्तिकर्ता कौन है, रुपयों का संदाय कर दिया। उप-अधीक्षक की उपस्थिति में संदाय करने और उसके पश्चात् मुद्रा अर्थात् रबड़ की मोहर के नीचे उसके प्रद्याक्षर लेने की प्रथा भी थी। इन विवादग्रस्त मामलों में उप-अधीक्षक के हस्ताक्षर प्राप्त नहीं किए गए थे और इसका कोई स्पष्टीकरण भी नहीं दिया गया है कि ऐसा क्यों किया गया था। उप-अधीक्षक ने स्पष्ट रूप से यह कहा है कि इन विवादग्रस्त प्रविष्टियों के सामने उसके हस्ताक्षर नहीं लिए गए थे और संदाय से सम्बन्धित कोई मोहर नहीं लगाई थी...। अतः मेरी राय में रोकड़िया भी अपने विरुद्ध लगाये गए आरोप से मुक्ति का दावा नहीं कर सकता। यह देखना उसका

1974(4) eILR(PAT) SC 1

कर्त्तव्य था कि संदाय सही व्यक्ति को किया गया था। साक्ष्य में यह स्पष्ट नहीं है कि ये संदाय उक्त अस्पताल के उप-अधीक्षक की उपस्थिति में किए गए थे। साक्षियों ने केवल सामान्य प्रथा के सम्बन्ध में कहा है।"

14. उच्च न्यायालय के विद्वान् न्यायाधीश ने निम्नलिखित शब्दों में महत्त्वपूर्ण मत व्यक्त किया है —

"मैं यह मत प्रकट करने के लिए बाध्य हूं कि अधीक्षक और उप-अधीक्षक दोनों ने अपने कर्त्तव्यों में लापरवाही की है और ये सब बातें इसलिए हुई हैं कि उन्होंने इन कर्मचारियों को ढील दे रखी थी। यदि अधीक्षक ने यह देखने की सावधानी बरती होती कि क्या वेतन बिल में लेखापाल के हस्ताक्षर हैं तो उसे इस बात का पता अवश्य लग जाता कि विवादग्रस्त वेतन बिलों पर लेखापाल के हस्ताक्षर नहीं थे और उससे उसे वेतन बिलों के सही होने के सम्बन्ध में सन्देह अवश्य हो जाता।"

15. उच्च न्यायालय के निष्कर्ष के आधार पर भी ड्यूटी चार्ट में यह बात नहीं थी कि यह देखने का कर्त्तव्य रोकड़िया का था कि संदाय ठीक या सही व्यक्ति को किया गया। इसके अलावा कोई ऐसा साक्ष्य नहीं है कि इन तीनों डाक्टरों से रोकड़िया परिचित था। दूसरी ओर, उच्च न्यायालय ने उसकी ओर से दी गई इस दलील को पूर्णतः अस्वीकार नहीं किया कि उसके लिए सभी डाक्टरों को जानना सम्भव नहीं था। उच्च न्यायालय ने उसके विरुद्ध इसलिए प्रतिकूल निष्कर्ष निकाला कि उसने रुपयों को वितरित करने से पूर्व यह अभिनिश्चित नहीं किया था कि उनका वास्तविक प्राप्तिकर्ता कौन है। अधीक्षक और उप-अधीक्षक के विरुद्ध व्यक्त किए गए महत्त्वपूर्ण मतों सहित उच्च न्यायालय के समक्ष सामग्री से रोकड़िया को भी युक्तियुक्त सन्देह का फायदा देने का मामला बन जाता है। उस साक्ष्य के आधार पर, जिसका उच्च न्यायालय ने उसके विरुद्ध अवलम्ब लिया है यह अभिनिर्धारित करना सम्भव नहीं है कि इस अभियुक्त के विरुद्ध अपेक्षित आपराधिक मन:स्थिति सिद्ध की गई है। जैसा कि लेखापाल के मामले में मत व्यक्त किया गया है, अधिक से अधिक यह न्याय की भूल या कर्त्तव्य के अनुपालन में भंग का मामला हो सकता है जिसे स्वतः भारतीय दण्ड संहिता की धारा 420 के अधीन आरोप सिद्ध करने के लिए बेईमानी के आशय के बराबर नहीं कहा जा सकता। परिणामस्वरूप अपीलें मन्जूर की जाती हैं। जहां तक इन दो अपीलार्थियों का सम्बन्ध है, उच्च न्यायालय का निर्णय अपास्त किया जाता है। इस मामले में दोनों अपीलार्थियों को आरोप से मुक्त किया जाता है और वे अपने जमानत पत्रों से उन्मोचित हो जाएंगे।

अपीलें मन्जूर की गईं।

च०/दे०